इकाई 13 अंतःधार्मिक सम्वाद*

रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 परिचय

13.2 जीवन के ढंग के रूप में बहुलता की अवधारणा

13.3 सम्वाद का विचार

13.4 धर्मों का नया सवेरा

13.5 सम्वाद की आज्ञा सूचकता

13.6 सम्वाद कैसे होता है?

13.7 सारांश

13.8 कुंजी शब्द

13.9 अन्य सहायक अध्ययन–सामग्री एवं सन्दर्भ

13.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

विविधता अथवा बहुलता सब जगह है। यह लोगों के जीवन पहनावों, भाषा, पूजा–शैली आदि के रूप में स्पष्ट होती है। कभी–कभी विविधता इतनी तीक्ष्ण होती है कि यह विरोधों यहां तक

* जे. ए. कर्वल्हो, गौतम नगर, नई दिल्ली।

अनुवाद– डॉ. विजय कुमार, सहायक प्राध्यापक, दर्शन विभाग, श्यामा प्रसाद मुखर्जी महिला महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।

की युद्धों को भी जन्म देती है, यह इकाई व्यक्तियों के मध्य सम्वाद को समस्याओं के हल के रूप प्रस्तुत करती है और बताती है कि सम्भवतः सन्देह और घृणा की स्थिति में सम्वाद ही सर्वश्रेष्ठ मार्ग है।

इस इकाई का अध्ययन आपको यह समझने में समर्थ बनायेगा किः

- बहुलता मानव प्रकृति का भाग है, और विविधता प्राकृतिक होने से इच्छित है;
- शुभ इच्छा वाले सभी व्यक्तियों के लिए सम्वाद सामान्य मानव उद्देश्य है; और
- धर्म अपनी विशिष्टता में तभी सह अस्तित्व में रह सकते हैं जबकि उनके मध्य बातचीत के माध्यम से सम्वाद होता रहे।

13.1 परिचय

हिंसा की घटनाएं वर्तमान में आम बात है। हिंसा व्यापक स्तर पर शत्रुता एवं घणा को बढ़ाती है। अनेक बार हिंसा धार्मिक समूहों के द्वारा की जाती है। सम्पूर्ण इतिहास वस्तुतः धर्मों की आपसी हिंसक लड़ाई का साक्षी रहा है। ईसाई और मुस्लिम यूरोप और मध्य पूर्व में धर्म युद्ध के नाम पर दशकों से संघर्षरत रहे हैं। यहूदी एवं अरब 1947, जब से इसराइल एक स्वतन्त्र राष्ट्र बना, से ही संघर्षरत है और यह संघर्ष अभी तक अनवरत चल रहा है। हिन्दू और मुस्लमान मुगल साम्राज्य के समय से ही संघर्ष कर रहे हैं और इस संघर्ष का शिखर भारत पाकिस्तान के विभाजन में दिखा विभाजन के समय केवल धर्म के नाम पर लोगों ने एक दूसरे की हत्या की और सम्पत्ति को नष्ट किया।

वर्तमान में, सितम्बर 11, 2001 में अमेरिका पर आतंकी हमला हुआ जिसमें 3000 से अधिक लोग मारे गये। यह आतंकवादी हिंसा में निर्णायक मोड़ था। इसने इतिहास–विमर्श को बदल दिया और इसे सभ्यताओं के संघर्ष की शुरूआत माना गया। संघर्षो और युद्धों ने कई नए देशों, जैसे कि बोसनिया, हरजेगोविना क्रोसिया, कोसोवा आदि को जन्म दिया। श्री लंका में भी पिछले 30 वर्षों से सिंहलियों और तमिलों के मध्य धर्म एवं संस्कृति के नाम पर खूनी संघर्ष हो रहे हैं। ऐसे ही संघर्ष, यद्यपि विभिन्न स्थिति में, वतीन इरान, चेचेन्या, इन्डोनेशिया,

अफगानिस्तान आदि में भी हो रहे हैं। समस्या का समाधान निकट भविष्य में भी दिखाई नहीं देता।

विश्व में मुख्य धर्म उत्तर आधुनिकता के संकट के दौर में हैं। कट्टर विचार और बदलते प्रतिरोधों के ढंग ने मानव के सोचने तथा देखने के दंगों को परिवर्तित किया है और धार्मिक व्यवस्थाओं को अत्याधिक प्रभावित किया है। सभी धर्म अत्याधिक अमूल परिवर्तनों, दूरगामी चुनौतीपूर्ण परिवर्तनों से गुजर रहे हैं। मानवता संकट के दौर से गुजर रही है और इससे पृथ्वी के बचे रहने पर भी संकट मंडरा रहा है।

अत्यधिक हिंसा की घटनाओं के कारण उत्पन्न निराशा के परिवेश में एक रचनात्मक आन्दोलन धीरे–धीरे उभर कर सामने आ रहा है। यह आन्दोलन एक नई सोच को लेकर आ रहा है, एक नये ढंग की कार्यशैली अथवा एक नई वैश्विक चेतना ले कर आ रहा है। इससे मानव एक दूसरे के समीप आ रहे हैं। दूसरी भाषा और सम्प्रेषण अवरोधक एवं भय उत्पन्न नहीं करते लेकिन संकीर्ण समूहवादिता अभी भी अस्तित्व बनाए है। आध्यात्मिकता को समझने के लिए नये आध्यात्मिक अनुभव उभार पर हैं।

आधुनिकता एवं उत्तर आधुनिकता पाश्चात्य जगत में बौद्धिक एवं वैज्ञानिक जागरण के नाम से जाने जाते हैं। इसने एक नयी प्रश्नवादी मानसिकता, धार्मिक विश्वासों एवं आधारों सहित, उत्पन्न की है। इसने अब तक अपरिवर्तित एवं वास्तविक समझे जाने वाले तथ्यों पर प्रश्न उठाए हैं। यह प्रबोधन काल के नाम से भी जाना जाता है। पिछले चार सौ वर्षो से यहूदीवाद और ईसाईयत तथा वर्तमान में बौद्ध धर्म हिन्दू एवं इस्लाम भी आधुनिकता का सामना कर रहे हैं। अब ये धर्म भी अपने धार्मिक परम्परागत मूल्यों को संरक्षित करते हुए आधुनिकता के दबाव में कुछ आधुनिक मूल्यों को अपनाने के लिए बाध्य हुए हैं।

हमारे जीवन को प्रभावित करने वाले मुद्दों के अर्थो और उत्तरों की इसी नयी खोज का प्रमुख परिणाम व्यापक रूप से स्वीकृत बहुलतावाद की सशक्त पुष्टि में हुआ है। अब कोई भी संस्कृति, जीवन जीने का ढंग धर्म एकेले सत्य स्वीकृत नहीं किया जाता। प्रबोधन काल का "एकीकृत सत्य" अब विश्व में अधिक प्रशंसनीय नहीं रह गया है। इस नये ढंग के चिन्तन के

फलस्वरूप एक नयी सामाजिक दृष्टि निकल कर सामने आ रही है। निवर्तमान व्यवस्था में जहां लोग जीवन के केवल एक ढंग को ही सत्य मानते हैं वहां सत्ता समर्पित विचार ही अन्तिम सत्य होता है। जब विविधता अथवा बहुलता व्यापक रूप से स्वीकृत हों तब व्यक्ति अन्यों के विचारों और अस्तित्व को स्वीकार कर पाते हैं। यह विशेषकर निर्धन, दमित, वंचित तथा बिना राजनैतिक, सामाजिक आवाज बालों के सम्बन्ध में अत्यधिक सत्य है। विविधता ऐसे ही वंचित–दमित लोगों की समस्याओं को उभारती है क्योंकि विविधता के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति जैसे हैं उन्हें वैसे ही उनकी भिन्नता अथवा समस्या से निपटने के उनके ढंगों के साथ स्वीकार किया जाना चाहिए।

बहुसंस्कृतिवाद 21वीं शताब्दी में पश्चिम में स्वीकृत वास्तविकता बन कर उभरा। जबकि आधुनिकता तथा वैज्ञानिक प्रमाण पूर्वी विश्व के लिए अपरिचित ही रहे। अतः पूर्व के धर्मों, जैसे कि हिन्दू और बौद्ध एवं अन्य पूर्वी अथवा जनजातिय धार्मिक धाराओं के विविधता के दृष्टिकोण को भिन्न ढंग से समझा जाना चाहिए।

13.2 जीवन के ढंग के रूप में बहुलता की अवधारणा

अपनी तात्कालिक चिन्ताओं, समुदायों, संस्कृतियों और धार्मिक विश्वासों से परे देखने के क्रम में हमें किसी विशेष धर्म या संस्कृति से आँख बंद करके नहीं जुड़ना चाहिए बल्कि हमें सांस्कृतिक एवं धार्मिक विविधता को वैश्विक परिदृश्य में देखना चाहिए। इस प्रकार, हम पर्वत शिखर पर बैठे उस व्यक्ति के सामन हो जाएंगे जो अपनी सीमाओं को पार करके सम्पूर्ण विश्व को सम्पूर्णता में देख पाता है।

अन्तरिक्षयात्रियों ने जब अन्तरिक्ष से प्रथम बार पृथ्वी को देखा तो उन्हें सम्पूर्ण पृथ्वी बिना किसी समुद्र, पर्वत, देश, महाद्वीप की भिन्नता के एक दिखाई दी। यह पृथ्वी पर खड़े व्यक्ति की सीमित देखने की शक्ति की अपेक्षा पूर्णतः भिन्न पृथ्वी थी। उन्होंने जो देखा वह अन्तर्सम्बन्धित, जैविक सम्पूर्ण, एक एकीकृत पृथ्वी थी। यह विचारणीय है कि इतिहास में जब संस्कृति वैश्विक रूप ले रही है तब हमने पृथ्वी को एकल पृथ्वी के रूप में देखा है। यह

ब्रह्माण्ड की काली पृष्ठभूमि में अन्तरिक्ष में अपनी कक्षा में घुमती हुई नीली सुन्दर पृथ्वी वस्तुतः 21वीं शताब्दी में वैश्विक चेतना को निरूपित करती है।

दार्शनिक परम्पराओं और धार्मिक आन्दोलनों ने विश्व की आश्यकताओं को समान रूप से निर्देशित किया है। यदि हम अपने विश्व पर दृष्टि डाले तो देखते हैं कि 800–200 ई. पू., 500 ई. पू. में अपने उच्च शिखर पर, के मध्य पृथ्वी के तीन भूभागों में बिना एक दूसरे को प्रभावित किए स्वतन्त्र रूप में मानव चेतना में एक बड़ा रूपान्तरण हुआ। चीन में, दो महान गुरू लाओत्से और कन्फ़्युसियस का प्रादुर्भाव हुआ तथा प्रज्ञा (विज़्डम) चीन के दर्शन के मूलतत्व के रूप में उभर कर सामने आई। भारत में वेदों के वैश्विक कर्मकाण्डीय हिन्दू धर्म–दर्शन का उपनिषदों द्वारा रूप परिवर्तित किया गया और बुद्ध तथा महावीर ने दो नए धर्मों की नींव रखी। इसी प्रकार मध्य पूर्वी धर्म में भी एक परिवर्तन हुआ। इजराइल में यहूदी मसीहा ऐलिजा, ईसाह और जर्नीयाह ने एक नयी नैतिक संकल्पना को प्रस्तुत किया। ग्रीस, जहां पाश्चात्य दर्शन की उत्पत्ति हुई. में सुकरात ने एथेन्सवासियों में नयी नैतिक चेतना उत्पन्न की और प्लेटो तथ अरस्तू ने प्रथम तत्वमीमांसा की उत्पत्ति की एवं विशेष एवं अनुभवित की अपेक्षा सामान्य की अवधारणा प्रस्तुत की।

आधी शताब्दी पूर्व कार्ल जेस्पर, जर्मन दार्शनिक, ने अपनी पुस्तक द ओरिजन एण्ड गोल ऑफ हिस्ट्री में एक महत्वूपर्ण विषय उठाया। 800–200 ई.पू. को निर्देशित करते हुए उसने कहा "इसने उस सब को उत्पन्न किया जिसे तब से मानव जान पाया है। इस समय में हम इतिहास की सबसे गहरी विभाजक रेखा को देख सकते हैं। मानव जैसा हम उसे जानते हैं। उस रूप में अस्तित्व में आया। संक्षेप में हम इसे अक्षवत् काल (Axial Period) कह सकते हैं। जेस्पर का इतिहास का दृष्टिकोण इस तथ्य में फलीभूत होता प्रतीत होताहै कि मानव स्वयं को देखने के और विश्व में अपनी भूमिका की समझने के ढंग के मध्य बड़े परिवर्तन को लेकर आया। इस स्वयं के महत्वपूर्ण दृष्टिकोण जिसे मानव ने धीरे–धीरे विकसित किया ने विश्व की प्रत्येक संस्कृति को प्रभावित किया है।

फिर चाहे यह चीन हो यूरोप हो या अमेरिका लगभग एक ही साथ हमने मिश्र चीन मेसोपोटामिया आदि में महान साम्राज्यों का उदय देखा। इन साम्राज्यों ने अधिक परिष्कृत सांस्कृतिक रूपों, यद्यपि समान को स्वीकार किया। इस महत्वपूर्ण काल से पूर्व के अधिकांश सांस्कृतिक और धार्मिक आन्दोलनों के विश्वास मुख्यतः जनजातिय, कर्मकाण्डीय, मिथकीय और ब्रहमाण्डीय रूप वाले थे। सभी आन्दोलन प्रत्यक्ष विषयों एवं प्रतीकों के इर्द–गिर्द खड़े हुए और पूर्णतः कर्मकाण्डों (पूजा, बलि, व्रत आदि) पर निर्भर थे। उस समय के धर्म में मिथ का अति महत्वपूर्ण स्थान था। यह लक्षण सभी प्राथमिक समुदायों में समान था। इन जनजातिय, कर्मकाण्डीय, मिथकीय ब्रह्माण्डीय प्रकृति (प्राकृतिक परिघटनाओं जैसे कि सूर्य, पृथ्वी, चंद्र, मौसम आदि क1 पूजा का विषय बनाना तथा वंश का प्रतीक बनाना) के विकस से यह स्पष्ट हो गया कि इन प्राथमिक समुदायों की चेतना मिथ और कर्मकाण्डों के विश्व में सामजस्य बठाने के लिए सदैव प्रयासरत रहती थी। जिस प्रकार वे स्वयं को प्रकृति का भाग मानते थे, उसी प्रकार स्वयं को जनजाति का भाग भी मानते थे। यह अन्तर्सम्बन्धिता उन्हें मनोवैज्ञानिक रूप से संभाले रहती थी और उनके जीवन को उत्साह देती थी। जनजाति से पृथक होना उनके लिए मानसिक एवं शारीरिक मृत्यु लेकर आता था। यद्यपि समग्रता के प्रति उनका सम्बन्ध प्रायः अपनी जनजाति से परे नहीं जाता था। क्योंकि वे अन्य जनजातियों को शत्रु भाव से देखते थे। तथापि अपनी जनजाति के क्षेत्र में वे अपने समूह से जीवन मृत्यु से तथा प्रकृति और ब्रह्माण्ड से पूर्णतः सम्बद्ध थे।

बोध प्रश्न I

ध्यातव्य : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का उपयोग कीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कीजिए।

1. विविधता या बहुलता क्या है?

.....

.....

.....

.....

2. हमारे विभेदों के साथ–साथ एक दूसरे को बेहतर ढंग से समझने के लिए हमारी आशा की वह किरण कौनसी है जिसकी अधिक से अधिक व्यक्ति बात कर रहे हैं?

.....

.....

.....

.....

13.3 सम्वाद का विचार

800–200 ई. पू. का काल, जिसे जेस्पर्स ने 'अक्षवत् (परिवर्तनकारी) काल' नाम दिया, एक नयी प्रकार की क्रान्तिकारी चेतना लेकर आया। इस काल में जनजातीय समग्र चेतना से व्यक्तिवादी चेतना में एक बदलाव स्पष्टतः दिखाई देता है। ग्रीक दार्शनिकों ने "स्वयं को जानो" (know thyself) का उदघोष किया तो उपनिषदों ने स्वयं के भीतर स्थिति तत्व "आत्मतत्त्व" की शिक्षा दी। गौतम बुद्ध ने व्यक्तिगत प्रबोधन की बात कही और यहूदी मसीहों ने व्यक्तिगत नैतिक उत्तरदायित्वरू के लिए कहा। यह काल अपने जनजातीय और प्राकृतिक स्वरूप से व्यक्तिगत तादात्म्यता की ओर बढ़ने के लिए प्रसिद्ध था। इस बहाव से अनुचिन्तनीय, विश्लेषणात्मक (वैज्ञानिक सिद्धान्तों को प्रकृति, सामाजिक आलोचना के रूप में समाज पर दर्शनशास्त्र के रूप में ज्ञान पर, व्यक्तिगत आध्यात्मिक यात्रा के रूप में धर्म पर लागू करना) चेतना का प्रदुभाव हुआ। यह आत्मचिन्तीय विश्लेषणात्मक, अलोचनात्मक चेतना पूर्णतः आद्य मिथकीय कर्मकाण्डीय रूप आज भी प्रचलित है, किन्तु वे अब निम्नस्तरीय माने जाते हैं।

परिधि से केन्द्र की ओर प्रतिस्थापन ने प्रकृति और जनजातियों के मध्य के सामंजस्य को हिला दिया और इसने व्यक्ति को इसकी पहचान से परिचित करवाया। यद्यपि यह परिचय व्यक्ति की

प्रकृति के साथ जैविक सामंजस्यता से रिक्त था। प्रकृति और जीवन के इस बिखराव ने व्यक्ति को सामाजिक संरचना के सम्बन्ध में प्रश्न करने में सक्षम बनाता है और स्वयं को प्रकृति के अमूर्त नियमों और उनके उपयोग की खोज में सलग्न किया है और तत्वमीमांसा के माध्यम से उनसे परे जाने के प्रयास को प्रोत्साहित किया है। जीवन के इस नये ढंग ने परम्परागत मुख्य धर्मों के उद्भव और उनके जनजातीय स्वरूप से हटने को सम्भव मनाया। विश्व के महान धर्म अक्षवत् काल के उत्पाद हैं। हिन्दू, बौद्ध धर्म, ताओ धर्म, कन्फ्यूसियस तथा यहूदी ने अपने शास्त्रीय स्वरूप को इसी काल में प्राप्त किया है; और यहूदी धर्म ने बाद में उभरने वाले ईसाई धर्म और इस्लाम के उद्भव के लिए आधार तैयार किया है।

13.4 धर्मों का नया सवेरा

मुख्य धर्मों के अनुयायियों के द्वारा अपने अन्दर झांकने ने इस नयी चेतना के सन्दर्भ में अत्यधिक आध्यात्मिक ऊर्जा का संचार किया। ध्यान एवं अनुचिन्तन ने आन्तरिक शक्ति को जगा कर आत्मनिष्ठता को मानव पहुँच में किया। इसने आन्तरिक आत्म की प्राप्ति के लिए मार्ग खोल दिया जिसने पुनः मानसिक जगत और सत को प्रामणित दृष्टि के भम्रों को दूर किया। नैतिकता के स्तर पर इसने व्यक्ति की नैतिक संचेतना को सामूहिकता के विरुद्ध आलोनात्मक दृष्टि अपनाने की अनुमति दी। और इसने आत्म के नैतिक तथा आध्यात्मिक पक्षों के मध्य सेतू का निर्माण किया ताकि सदगुणों के माध्यम से आध्यात्मिक खोज सम्बन्धित परम लक्ष्य की ओर एक मार्ग बनाया जा सके। धर्म बिहारों का निर्माण इस नयी चेनता का प्रमुख प्रतिफल था। यद्यपि इसकी शुरूआत हिन्दू धर्म से हुई किन्तु इसने बुद्ध धर्म एवं जैन धर्म में निर्णायक वृद्धि की तथा बाद में इसका प्रसार ईसाईयत में भी हुआ।

जहां 800–200 ई. काल में हम अधिकांश धार्मिक दृष्टि में समानता देखते हैं वहीं ऐसी ही समानता 20वीं शताब्दी के अन्त और 21वीं शताब्दी के प्रारम्भ में भी दिखाई देती है। यहां हम पुनः उसी महत्व की परिघटना को देखते हैं। पिछले 50 वर्षों से सम्पूर्ण विश्व में एक साथ धार्मिक एकता की ओर सहमति बनती दिखाई दे रही है। पेरेस्ट्रोइका चीन– अमेरिका, यूरोपिय संघ, चीन, जापान, अफ्रीका देशों की एकता पारिस्थितिकीय संरक्षण की अवधारणाओं ने

मानवता को एक–दूसरे के समीप ला दिया है, वैश्विक गांव प्राक–एकता की ओर लौटने की ओर लौटने का महत्वपूर्ण लक्षण है। विकसित और विकासशील देश आपसी सामंजस्य केलिए एक दूसरे के साथ काम करने के लिए अनिवार्य कारणों से साथ आ रहे हैं। इस आन्दोलन से विश्व के मुख्य धर्म भी प्रभावित हुए हैं।

टिल हार्ड द चारडिन, महान जीवाश्म वैज्ञानिक विचारक, दार्शनिक निष्कर्ष रूप में यह कहते हैं कि पिछले 100 वर्षों में "ग्रहीकरण" (planetization) पृथ्वी ग्रह की सभी वस्तुओं को एक प्रकार की जैविक एकता के लिए एक साथ रखना) के कारण ब्रह्माण्ड में समाभिरूपता की ओर न की विभेदीकरण की ओर एक परिवर्तन होता दिखाई पड़ रहा है। उनके अनुसार गृह पर प्रथम प्रदुभाव के साथ ही मानव परिवार एवं जनजातीय समूह अपनी स्वयं की पहचान बनाते तथा स्वयं को अन्य जनजातियों से पृथक करते हुए एकत्रित हुए। इस प्रकार मानव ने विभिन्नता के आधार पर देशों का निर्माण करते. हुए संवर्धित संस्कृतियों का निर्माण किया तथापि पृथ्वी की सीमाओं ने इस प्रक्रिया को रोक दिया। जनसंख्या वृद्धि तथा संचार के तीव्र विकास के कारण समूह पृथक नहीं रह सके। अन्ततः प्रभुत्व के लाखों वर्षों के बाद विभिन्नता के स्थान पर समाभिरूपता का आगमन हुआ है। समाभिरूपता की इस प्रक्रिया के कारण अनेक संस्कृतियों एक ग्रहीकृत समुदाय की ओर बढ़ रही हैं। यद्यपि, हम हजारों वर्षों की विभिन्नता की प्रवृत्ति के साथ अनुकूलित हो चुके हैं किन्तु अब हमारे पास वैश्विक चेतना के अनुसार चलते हुए दूसरे से रचनात्मक सहयोग करते हुए समाभिरूपता की ओर बढ़ने के अतिरिक्त कोई और अन्य मार्ग नहीं है।

टिलहार्ड के अनुसार, इस वैश्विक चेतना के होते हुए भी ऐसे विभेदीकृत आन्दोलन भी होगे जो स्वयं को रचनात्मक एकीकरण के नाम पर समूहीकृत करेंगे। इस रचनात्मक एकता के तहत वे अपने राष्ट्र के अन्दर बहुलता को भी लेकर आएंगे। उनके विविधकृत एकता का विचार को सर्वोत्तम ढंग से "जटिलता सम्पन्न चेतना' (Complexity consciousness) और "एकीकृत विभेदित" (Union dffierentiates) के द्वारा बतायी जा सकती है। मानव की चेतना इस एकता की अपेक्षा जटिलता के बारे में अधिक से अधिक जागरूक इस परिणाम के साथ कि यह एकता के अन्दर विविधता के नये प्रतिमान की रचना करती है हो रही है। इस बिन्दू पर, विभिन्नता से

समन्वयता की ओर प्रतिस्थापना के कारण ग्रहीकरण की शक्तियां संस्कृतियों और धर्मों के अभिसरण के द्वारा चेतना के अभूतपूर्व जटिलीकरण को लेकर आ रही है।

13.5 सम्वाद की आज्ञा सूचकता

प्रथम अक्षवत् काल (800–200 ई.पू.) में विश्व के धर्मों ने विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों के आधार पर विभेदन के द्वारा विभिन्न धाराओं में अपनी चेतना का विकास किया। इसने प्रशंसनीय रूप से आध्यात्मिक प्रज्ञा, आध्यात्मिक ऊर्जाओं और अभिव्यक्तियों के धार्मिक सांस्कृतिक रूपों को अभिव्यक्त, संरक्षित एवं आगे संचरित किया। अब चूंकि विभिन्नता का विचार एकता में परिवर्तित हो गया है। इसलिए प्रत्येक धर्म को दूसरे धर्मों के साथ एकता की दृष्टि से देखना चाहिए और देखना चाहिए कि उनमें सार्वाधिक प्रमाणिक तत्व क्या है। उन्हें अत्यधिक जटिल धार्मिक चेतना की ओर रचनात्मक ऊर्जा का संचार करना चाहिए।

21वीं शताब्दी के प्रारम्भ को उस चेतना से विशेषित किया जा सकता है जो एकता के परिदृश्य में आगे बढ़ रही है। अंतःधार्मिक सम्वाद एक ऐसा ही प्रयास है जिसे द्वन्द्वात्मक सम्वाद से विभेदित करने के कारण "सम्वादात्मक सम्वाद (dialogic dialogue)" कहा जाता है। जहां द्वन्द्वात्मक सम्वाद का अर्थ है अपने विचार को स्थापित करना अथवा अन्यों के विचारों का खण्डन करना वहीं सम्वादात्मक सम्वाद से तात्पर्य है – एकता अथवाआपसी समझदारी विकसित करने के लिए सम्वाद करना सम्वादात्मक सम्वाद के तीन चरण हैं; 1) सहभागी परस्पर समझदारी के साथ, एक दूसरे के बारे में गलत धारणाओं को दूर करने के लिए तैयार रहने के साथ और एक दूसरे के मूल्यों की प्रशंसा के लिए तत्पर रहने के साथ एक दूसरे से मिलते हैं। 2) एक दूसरे की दृष्टि से एक दूसरे के मूल्यों का अनुभव करने के लक्ष्य से एक दूसरे की चेतना के स्तर पर जाकर पारस्परिक रूप से संवर्धित होते हैं। यह एक दूसरे के ऐसे मूल्यों, उनकी दृष्टि में नहीं है अथवा उनकी दृष्टि से संगत नहीं है, को खोज कर किया जाता है। इस प्रक्रिया में एक दूसरे की परम्पराओं की स्वायत्ता को सम्मान प्रदान करके ही आगे बढ़ा जा सकता है। टिलहार्ड के शब्दों में, ऐसी एकता प्राप्त करना जिसमें विभेदों की रचनात्मकता का मूल स्वीकार किया जाता है। 3) यदि ऐसी रचनात्मक एकता को प्राप्त कर

लिया जाता है तो धर्म को चेतना के जटिलीकृत रूप की ओर प्रस्थान करना होता है। चेतना का यह जटिलीकृत रूप 21वीं शताब्दी की विशेषता होगी। यह जटिलीकृत वैश्विक चेतना होगी न कि केवल सार्वभौमिक, अविभेदित, अमूर्त चेतना यह संस्कृतियों एवं धर्मों की वैश्विक एकता के कारण वैश्विक तथा सम्वादात्मक सम्वाद के कारण जटिलीकृत होगी।

अभिसरण की शक्तियां केवल धार्मिक एवं सांस्कृतिक अवबोध तक ही सीमित नहीं हैं वरन् पृथ्वी के अस्तित्व के सम्मुख उपस्थित चुनौतियों से भी सम्बन्धित हैं। मानव की चेतना पृथ्वी के अस्तित्व से जुड़ी हुई है। औद्योगीकरण, प्रगति और प्राकृतिक संसाधनों का दोहन जीवनदायी जैविक व्यवस्था को नष्ट कर रहा है। इस प्रकार मानव का भविष्य पर्यावरणीय प्रदूषण, प्राकृतिक संसाधनों के क्षरण, सम्पत्ति के असमान वितरण, परमाणु बमों के कारण अन्धकार में दिखाई दे रहा है। जब तक मानव विनाश की इन प्रक्रियाओं को रोकता नहीं है तब तक हमारा पृथ्वी पर जीवित रहना दुष्कर है। यह समस्या सम्पूर्ण मानव जाति की है। अतः हमारे सम्मुख पृथ्वी एवं जीवन चक्रों से जुड़े प्राक व्यक्तियों की सामूहिक और वैश्विक आध्यात्मिक चेतना के आयामों को पुनः खोजने की चुनौती है।

अन्तःधार्मिक और अन्तः सांस्कृतिक सम्वादों को विभिन्न धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्यों वाली मानवीय एकता को स्थापित करने की आवश्यकता है। अर्थात् 21वीं शताब्दी की चेतना दो दृष्टि से वैश्विक होगीः

1) **क्षैतिज (Horizontal) दृष्टिः** संस्कृति और धर्म को पृथ्वी के स्तर पर मिलकर जटिलकृत सामूहिक चेतना को उत्पन्न करने वाली रचनात्मक संक्रियता की स्थापना करना।

2) **लम्बवत् (Vertical) दृष्टिः** मानव को स्थिर एवं सुरक्षित विकास प्रदान करने के क्रम में पृथ्वी की सुरक्षा को केन्द्र में रखना यह नयी वैश्विक चेतना जैविक रूप से परिस्थिकीय, न्याय और शन्ति प्रदायी संरचना से समर्पित होनी चाहिए। निर्धन तथा दमित, नस्ली तथा सामुदायिक अल्पसंख्यक और महिलाओं की आवाज को सुनना चाहिए तथा उनकी समस्या को हल किया जाना चाहिए। यह द्विस्तरीय वैश्विक चेतना 21वीं शताब्दी की संवृद्धि के लिए केवल रचनात्मक सम्भावना मात्र) नहीं है; यदि हम जीवित रहना चाहते हैं तो यह अनिवार्यता है।

13.6 सम्वाद कैसे होता है?

21वीं शताब्दी के धर्म से क्या तात्पर्य है? इसका अर्थ है कि मानवों को दोहरा कार्य करना पड़ेगा धर्मों के मध्य रचनात्मक सम्वाद प्रारम्भ करना और मानव की साझा समस्या का समाधान खोजने के लिए ऊर्जाओं का संचरण करना। अर्थात उन्हें धर्म के प्रति नकारात्मक और सीमित प्रवृत्तियों को त्यागना होगा। उन्हें संकीर्ण कट्टरतावाद तथा शुद्ध सार्वभौमिकतावाद दोनों को छोड़ना होगा। सभी को अपनी सच्ची आध्यात्मिकता के प्रति समर्पित होना होगा। उन्हें अपनी परम्पराओं के प्रति आस्थावान रहते हुए अन्य परम्पराओं को भी समझने के लिए तैयार रहना होगा। अन्य धर्मों के साथ उन्हें एक मानवीय अनुभूति वाली जटिलिकृत वैश्विक चेतना विकसित करने के प्रति समर्पित होना होगा।

केवल आध्यात्मिक स्तर पर एक दूसरे से जुड़ना ही पर्याप्त नहीं होगा। उन्हें अपने आध्यात्मिक संसाधनों को वैश्विक समस्याओं के हल में भी लगाना होगा और इसके लिए धर्मों को रूपान्तिर होने की आवश्यकता है। धर्मों को अस्तित्व के भौतिक पक्ष को पुनः खोजना होगा और आध्यात्मिक महत्व को पहचानना होगा। इसमें उन्हें पक्षपात हीन विश्व से यह सिखाना होगा कि न्याय और शक्ति ऐसे मूल्य हैं जिन्हें संरक्षित एवं संवर्धित किया जाना चाहिए। परन्तु उन्हें पूर्णतः धर्म निरपेक्षता को स्वीकार करना चाहिए क्योंकि उनका विशिष्ट योगदान अपनी संरक्षित आध्यात्मिक ऊर्जा के प्रयोग में लाना होगा और इसे शुद्ध मानवीय धर्मनिरपेक्ष उद्यमों में लगाना होगा।

सम्वाद में प्रारम्भिक बाधा 'अन्यों' लेकर निर्मित पूर्वग्रह होते हैं। वस्तुतः प्रत्येक व्यक्ति विशेष के और समुदाय के जीवन अनुभव धार्मिक पहचान के मुद्दों की अपेक्षा कहीं अधिक व्यापक एवं जटिल होते हैं। यह अनिवार्य है कि सम्वाद का उद्देश्य व्यक्तियों के मन में अन्यों को लेकर उत्पन्न पूर्वाग्रहों का निराकरण करना होना चाहिए। कैसे भी सम्वाद को उस स्तर पर पहुँचना है जहां व्यक्ति अथवा समुदाय एक दूसरे से मैं और अन्य के स्तर पर क्रिया नहीं करते बल्कि उनकी समान एवं साझी पहचान के स्तर पर क्रिया करते हैं। मानवों, जो परम्पर अनिवार्य तथा जीवन के लिए अपरिहार्य समाधानों की खोज में हैं।

सम्वाद यह स्वीकार करते हुए कि पारस्परिक समझदारी और उनके लिए कार्य करने के लिए भिन्नताओं को स्वीकार किया जाना अनिवार्य है, प्रश्न पूछने और पूछे जाने के लिए तैयार होना है। संक्षेप में सम्वाद साथ रहने और सीखने के लिए, स्थिर मानव समाज के लिए, अनिवार्य शन्ति उत्पन्न करने के लिए विभिन्नता और समानता के अंतःनिहित मूल्य को ग्रहण करने का एक प्रयास है। अंतःधार्मिक सम्वाद हमें एक दूसरे के बारे में ज्ञान प्राप्त करने की सफल पद्धति प्रदान करता है। यह वह पद्धति है जो मानवों के मध्य हजारों वर्षों से चलती आ रही है।

भिन्न लक्ष्यों तथा दृष्टियों के कारण विभिन्न धार्मिक संस्कृतियों के मध्य संरचनागत अन्तर भी होते हैं। इसलिए, सम्वाद सर्वप्रथम प्रत्येक समुदाय में ही किए जाने चाहिए क्योंकि उसके सदस्यों में अन्तः सांस्कृतिक सम्वाद के रूप तथा उद्देश्य में विवाद हो सकता है और सम्वाद के किसी भी प्रकार को लेकर विरोध हो सकता है। अतः अंतःधार्मिकः वर्ग / नस्ल / लिंग आदि के मध्य सम्वाद की शुरूआत यह सोच कर करना अनिवार्य है कि धार्मिक टिप्पणियां / अभिव्यक्तियां सदैव कट्टर धार्मिकता के कारण नहीं होती बल्कि विभिन्न दृढ़ सांस्कृतिक सन्दर्भों में हो सकती है। अतः सभी सम्वाद व्यावहारिक एवं प्रकार्यात्मक सहमतियों से प्रारम्भ होते हैं। सम्वादों को हठवादी नहीं वरन उपयोगितावादी होना चाहिए।

सम्वादों को विशिष्ट उद्देश्यों वाले विशिष्ट विषयों (जैसे कि प्रजातन्त्र, मानव अधिकार,शिक्षा, वैश्विकीकरण, परिस्थिति की धार्मिक सहिष्णुता, स्त्री अधिकार आदि) पर केन्द्रित करना चाहिए। सम्वादों को सतही स्तर वाला नहीं होना चाहिए। भिन्नताओं के साथ समानताओं और सामान्यताओं पर भी चर्चा होनी चाहिए। सम्वाद का उद्देश्य अनिवार्य रूप से "अन्यों" के विश्वासों को स्वीकार करना है उनका अनुसरण करना नहीं है या फिर दूसरों के विश्वासों को हल्का सिद्ध करना नहीं है, वरन् भिन्नताओं के प्रति सम्मान उत्पन्न करना है।

ईसाईयों और मुस्लमानों अथवा हिन्दू और मुस्लमानों मध्य सम्वाद सीधा तथा आसान नहीं होता क्योंकि एक दूसरे को विभेदित करने वाले मुद्दों पर चर्चा करना स्पष्टता और समाधान नहीं लिए होता विभेदित करने वाले तत्व शब्द मात्र से कही अधिक होते है। क्योंकि वे मानव के

मन और हृदय से सम्बन्धित होते हैं। अतः सम्वाद की कोई भी प्रक्रिया केवल "संस्कृतिकरण" (culturalisation) (प्रत्येक वस्तु को संस्कृति के चश्मे से देखना) और धार्मिक स्वीकारोक्तिकरण (confessionalisation) (प्रत्येक विमर्शित वस्तु को धर्म के चश्मे से देखना) तक ही सीमित नहीं होनी चाहिए। आवश्यकता सम्वाद को धार्मिक विश्वासों और मान्यताओं से परे ले जाने की है। सम्वाद एक साथ सभी स्तरों, सभी समुदायों और समूहों, जीवित सांस्कृतिक एवं सामाजिक परिस्थितियों पर होना चाहिए। साथ ही, सम्वाद आकस्मिक बात–चीत नहीं है बल्कि उसका उद्देश्य दूसरे के सम्मुख अपनी बात रखना, सत्य की खोज करना है। यदि ऐसा नहीं है तब सम्वाद एक निरर्थक क्रिया है।

बोध प्रश्न II

टिप्पणीः क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का उपयोग कीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कीजिए।

1. "संस्कृतिकरण" और "धार्मिक स्वीकारोक्तिकरण" से आप क्या समझते हैं? सम्वाद को इन दोनों से परे क्यों जाना चाहिए?

.....

.....

.....

.....

13.7 सारांश

धार्मिक बहुलतावाद में हम "विभिन्नता" अथवा "अन्यता" को धार्मिक ढंग से समझते हैं। यह रूढोक्ति (eliche) प्रदर्शित हो सकता है किन्तु अंतःधार्मिक सम्वाद भिन्न विचारों तथा रूचियों वाले दो व्यक्तियों का आपस में अन्तःक्रिया करना मात्र नहीं है। यह ऐसे व्यक्ति के साथ

बात–चीत करना है जिसके पास ऐसा कुछ है तो मेरे लिए घृणित, अस्वीकार्य, मूखर्तापूर्ण, तथा निरर्थक है। रेमन पण्णिक्कर कहते हैं कि "बर्बर व्यक्ति के साथ क्या करना चाहिए? बहुलतावादी विश्व में धर्म का केन्द्रीय प्रश्न है। हमारे सब के पास "बर्बरवादी व्यक्ति की अपनी अवधारणा है। हम सबके लिए कोई न कोई व्यक्ति अथवा परम्परा बर्बरवादी है। धार्मिक बहुलतावाद में प्रश्न यह है कि हम अपने से भिन्न से कैसे सम्बद्ध स्थापित करें। बहुलतावाद विविधि, विभिन्न धार्मिक परम्पराओं में पाए जाने वाले अन्तरों का भिन्नताओं के एक एकल मार्ग में समन्वय बिना सम्मान करना है। बहुलतावाद धार्मिक भिन्नता की अस्पष्टता को दूर करने के लिए कार्य करता है। इस दृष्टि से बहुलतावाद अत्यन्त साहसी व्यवहार है, विश्व की विविधता की सत्य के साथ क्रिया करना है। और यह व्यवहार चिन्तनशील समुदायों के लिए अत्यन्त महत्व का है। वास्तव में, मैं निश्चित नहीं हूँ कि बिना बहुलतावाद के सच्ची चिन्तनशीलता सम्भव है या नहीं।"

यद्यपि, अंतःधार्मिक सम्वाद दार्शनिक रूप से स्पष्ट है किन्तु वास्तविक सम्वाद का कार्य अत्यन्त कठिन है। विभिन्न धर्मों और संस्कृतियों के मध्य सम्वाद आरम्भ करना और सतत चलाए रखने के लिए हमारे लिए "अन्य" को समझने की नयी पद्धति को स्वीकार करना अनिवार्य है। जब हम यह जान जाते हैं कि हमारा सत् का विचार सीमित है तब हमारे लिए इस विचार पर अन्य के साथ विमर्श करना सम्भव हो जाता है क्योंकि अन्य का सत सम्बन्धी विचार भी सीमित ही होता है। हम समान कोटियों तथा प्रतीकों का प्रयोग कर सकते हैं और यह प्रयोग हमें समान स्तर पर सम्प्रेषण कर सकता है।

अंतःधार्मिक सम्वाद की प्रक्रिया अत्यन्त कठिन है क्योंकि "अन्य" को देखने का हमारा दृष्टिकोण मौलिक और सटीक होता है। मैं जिसके साथ सम्वाद में होता हूं। मैं उसके और वो मेरे सत् के विचार से अनभिज्ञ होता है किन्तु फिर भी सम्वाद होता है। जिस प्रकार द्वन्द्व वस्तुओं के अनुक्रम में विश्वास करके सत्य की खोज करते हैं वैसे ही सम्वाद अन्यों पर विश्वास करके सत्य की खोज करते हैं। द्वन्द्वात्मकता बुद्धि का आशावाद है; सम्वाद हृदय का आशावाद है। द्वन्द्वात्मकता का विश्वास है कि यह सत्य को प्रत्ययों की वस्तुगत संगतत के

आधार पर देखता है। सम्वाद यह विश्वास करता है कि यह सत्य की प्राप्ति सम्वाद में भाग लेने वालों की आत्मनिष्ठ संगतता के आधार पर कर सकता है।

सम्वादात्मक सम्वाद के कुछ अत्याज्य निश्चित आधारगत नियम हैं। वे हैंः मानक इमानदारी, बौद्धिक खुलापन और अपनी परम्परा के प्रति पूर्णतः अस्थावान रहते हुए पूर्वाग्रहों से मुक्ति। वास्तव में, सम्वादात्मक सम्वाद के लिए प्रारम्भिक बिन्दु अन्तः और आन्तरिक सम्वाद है जिसके द्वारा व्यक्ति अपनी परम्परा का चेतन और आलोचनात्मक ढंग से गुणगान करते हैं। अपनी परम्परा के प्रति गहन अवबोध तथा समर्पण के बिना सम्वादात्मक सम्वाद आगे नहीं बढ़ सकता। दूसरे, अन्य व्यक्ति की परम्परा के प्रति गहन समर्पण तथा उसे समझने की तीव्र इच्छा। जिसका अर्थ है नये सत्य को ग्रहण करने के लिए तैयार रहना क्योंकि व्यक्ति दूसरे के विचारों को स्वयं के साथ साझा किए बिना नहीं समझ सकता। यह दूसरी परम्पराओं के प्रति असमीक्षात्मक दृष्टि को रखना नहीं है यह पूर्वाग्रहों और अज्ञानता से उत्पन्न अपरिपक्व पूर्वाग्रहों को त्यागना है।

यद्यपि हमारी सांस्कृतिक और धार्मिक परम्पराएं हजारों वर्षों के विभेदन, शत्रुता और हिंसा से निर्मित हैं किन्तु हम फिर भी एक ऐसे मानव–समाज की स्थापना कर सकते हैं जिसमें सभी स्त्री पुरुष शान्तिपूर्ण, स्वास्थ्य और सुरक्षित पर्यावरण में रह सकते हैं। यह एक ऐसा विश्व होगा जहां के सभी नागरिकों को अच्छी शिक्षा, स्वास्थ्य सुविधाएं और साफ घर प्राप्त होंगे। यह एक परिस्थितिकीय रूप से सन्तुलित वैश्विक समाज, जिसमें सभी को

समान अवसर उपलब्ध हो. वाला विश्व होगा अपने पूर्ण सामर्थ्य के उपयोग के लिए वैश्विक चेतना हमें सामाजिक समस्याओं के पूर्ण हल की अनुमति देती है।

यद्यपि, शताब्दी से हमारे समाज में विभाजन और खूनी संघर्ष रहा है किन्तु फिर भी मानव सदैव सर्वोत्तम का प्रयास करता है, वह सर्वोत्तम जो हमारी चेतना का भाग है अथवा जिसे हम वैश्विक चेतना भी कह सकते हैं। निसन्देह अभी भी मानव को अपने सामर्थ्य को प्राप्त करना है, और यहां तक कि हमारा श्रेष्ठ विश्व को निर्मित करने का सर्वोत्तम प्रयास भी अभी तक सफल नहीं हुआ है। वर्तमान में एक ऐसी सामाजिक जागरूकता उभर कर सामने आ रही है

जो उपरोक्त समस्याओं का वैश्विक स्तर पर समाधान प्रस्तुत करने के लिए तत्पर है। अब वैश्विक नैतिकता (जीवन का श्रेष्ठ ढंग) की अत्यधिक आवश्यकता है।

13.8 कुंजी शब्द

विविधता अथवा बहुलतावाद : यह हमारे चारों और उपस्थित विभिन्न जीवन रूपों और भिन्न मतों को देखने की तथा उन्हें बिना किसी एक मत या रूप में समेट कर स्वीकार करना है।

ग्रहीकरण : इसका प्रयोग टिलहार्ड द चार्डिन ने जैविक एकता के निर्माण के उद्देश्य से विश्व में अन्तर्निहित शक्तिों या अवस्थितियों की व्याख्या करने के लिए किया। वह यह एकता अन्तनिर्भर, अवबोध, अनुकूलता, सामाजिक न्याय आदि के माध्यम से सामरसता, शन्ति और उन्नति प्राप्त करने के लिए प्राप्त करना चाहते हैं।

चेतना का जटिलीकरण : यह वह सिद्धान्त है जो प्राकृतिक विविधता की व्यापकता, विश्वास और विचारों सहित की व्याख्या का प्रयास करता है।

13.9 अन्य सहायक अध्ययन–सामग्री एवं सन्दर्भ

- डी चार्डिन, टिलहार्ड. *द फिनोमेना ऑफ मेन.* न्यू यार्कः हार्पर पेरेनियल, 2008.
- फ्रायडमेन, मोरिस. *माट्रिन बुबर द लाइफ ऑफ डायलॉग.* शिकागोः यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, 1950.
- जेस्पर, कार्ल. *द आरोजिन एण्ड गोल ऑफ हिस्ट्री.* न्यू हेवेनः येल यूनिवर्सिटी प्रेस, 1953.
- पण्णिक्कर, रेमन. *द इण्टर रिलिजियस डायलॉग.* न्यू यार्कः पालिस्ट प्रेस, 1999.
- .....*द कॉस्मोथियेन्ड्रिक ऐक्सपिरियन्सः इमरजिंग रिलिजियस कान्सियसनेस.* न्यू यार्कः आरबिस बुकस, 1993.

वेबसाइट

Concilium International Journal for Theology: www.concilium.org. *Lausanne Committee for World Evangelisation:* www.lausanne.org. *Presbyterian Church (U.S.A.):* www.pcusa.org.

Qantara: www.qantara.de.

Quakers: www.quaker.org.uk.

Religion in Eastern Europe: www.georgefox.edu/academics/undergrad/departments/soc-swk/ree/

The Tablet: www.thetablet.co.uk.

United States Institute of Peace: www.usip.org.

Watchman Expositor, The journal of Watchman Fellowship: www.watchman.org/expo/

13.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न I

1. यद्यपि हमारा विश्व लाखों भिन्न–भिन्न वस्तुओं से बना है, रंगों (अनेक संयोजनों सहित) से लेकर वनस्पतियों और पशुओं की अत्यधिक विविधता के साथ–साथ कखन, पान, पहनावा और विचार के विविध तरीके, फिर भी बहुधा हम इस दुनिया को बहुत ही सीमित एवं संकीर्ण परिप्रेक्ष्य में देखने के अभ्यस्त हैं, क्योंकि हम किसी समुदाय–विशेष से सम्बन्धित होकर कार्य करने और वास्तविकता को देखने के विशिष्ट तरीके रखते हैं। बहुलता (हमारे सन्दर्भ में) वह सामर्थ्य है जिससे हमारी बात–चीत और अन्यों से सम्बन्धों में वास्तविकता को जैसे वो है वैसी ही देखते और स्वीकारते हैं।

2. यद्यपि बीते 50 या अधिक वर्षों में अधिक युद्ध और संघर्ष देखने को मिले हैं और स्थिति बदतर हुई है, फिर भी अधिक लोगों ने और महान प्रयास किये हैं जैसे, वैश्वीकरण, सम्वाद, यात्रा, वस्तुओं का समान वितरण, सहमति और विमर्श के लिए अधिक से अधिक संस्थाओं की स्थापना। अधिक से अधिक लोग शान्ति एवं सामंजस्यपूर्ण जीवन के लिए बातचीत, समझौता एवं समझ इत्यादि की आवश्यकता स्वीकार रहे हैं।

बोध प्रश्न II

1. संस्कृतिकरण वह प्रवृत्ति है जिसमें मानवीय जीवन से सम्बन्धित प्रत्येक आयाम को संस्कृति के दायरे में रखकर अध्ययन किया जाता है, जबकि धार्मिक स्वीकारोक्तिकरण वह प्रवृत्ति है जिसमें सभी को धर्म से सम्बन्धित कर दिया जाता है। यहाँ यह समझना आवश्यक है कि मानवीय समूह और समुदाय जीवन को देखने और जीने के विविध तरीके रखते हैं, जोकि संस्कृति और धर्म के कुलयोग से काफी अधिक हैं। कई हाव–भाव और प्रथायें कई अनेक कारकों का परिणाम हैं जो किसी समूह की पहचान होते हैं और उसकी विश्वास–प्रणाली का हिस्सा बनते हैं। अतः सम्वाद वह बातचीत है, जिसमें व्यक्ति के कृत्य को बिना किसी विशिष्ट पहचान से जोड़कर व्यक्ति से बात की जाती है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY